Swami Sharnanandji (Manav Seva Sangh)

दिनांक, ६ सितम्बर, १९५४

चरित्र-निर्माण

मरे निजस्वरूप उपस्थित महानुभाव !

चरित्र-निर्माण मानव-जीवन में एक महान् बल है। उसकी आवश्यकता मानव-मात्र को है। इसके बिना मानव 'मानव' नहीं हो सकता। वीतराग होने में ही चरित्र-निर्माण की पराष्ठा है और वीतराग होने में ही पूर्ण मानवता का विकास है। चरित्र-निर्माण में ही अपना कल्याण तथा समाज का हित निहित है। इस दृष्टि से चरित्र-निर्माण जीवन का आवश्यक अंग है।

चरित्र-निर्माण वास्तव में अन्तःप्रेरणा है, क्योंकि किसी को भी चरित्रहीन की आवश्यकता नहीं है। इस दृष्टि से समाज को एक-मात्र चरित्रवान् व्यक्ति की ही आवश्यकता है। इतना ही नहीं, अपनी निर्बलताएँ मिटाने में भी सच्चरित्रता ही समर्थ है।

चरित्र को सुरक्षित रखने के लिये सब कुछ न्योछावर किया जा सकता है, किन्तु चरित्र किसी के बदले में नहीं दिया जा सकता। अतः चरित्र का महत्व शरीरादि सभी वस्तुओं से

Swami Sharnanandji (Manav Seva Sangh)

अधिक है । चरित्र-निर्माण करने में जितेन्द्रियता अत्यन्त अनिवार्य है, क्योंकि इन्द्रिय-लोलुपता के कारण ही हम चरित्र-हीन हो जाते हैं । भुक्त इच्छाओं के रस की स्मृति और अभुक्त इच्छाओं की आशा ही इन्द्रिय-लोलुपता को पुष्ट करती है । इससे यह सिद्ध होता है कि जीवन में उत्पन्न हुई नीरसता को दबाने तथा भुलाने के लिये प्राणी इन्द्रिय-लोलुपता का आश्रय लेता है । यद्यपि नीरसता मिटाने के लिये नित-नव-रस की आवश्यकता है, चरित्र-हीनता की नहीं । नित-नव रस की प्राप्ति प्रीति से होती है, किसी सुख-भोग से नहीं । प्रीति की प्राप्ति अचाह से होती है, किसी राग से नहीं । अचाह-पद की प्राप्ति विवेक से होती है, जो मानव-मात्र में विद्यमान है ।

उस विद्यमान विवेक के प्रकाश में ही हमें अपनी वर्तमान वस्तु-स्थिति देखना है । ऐसा करने से हमें अपनी निर्बलताओं का तथा अपने बनाये हुए दोषों का ज्ञान हो जायगा । अपनी निर्बलता का ज्ञान वेदना जाग्रत् करने में समर्थ है । यदि उस वेदना को परदोष-दर्शन से दबाया न जाय, तो वेदना भी स्वत: दोषों को भस्मीभूत कर निर्दोषता की स्थापना में समर्थ हो जाती है और फिर निर्दोषता दोषों को उत्पन्न नहीं होने देती । इस दृष्टि से वेदना और दोषों का न दोहराना ही निर्दोष बनाने का मुख्य हेतु है ।

वेदना और दु:ख में अन्तर है । वेदना अभाव मिटाने की पीड़ा है, अथवा यों कहो कि वेदना मानव की वास्तविक भूख है । दु:ख के दो रूप हैं, एक तो सुख-भोग की आशा और दूसरा

www.swamisharnanandji.org

Swami Sharnanandji (Manav Seva Sangh)

सब प्रकार के अभाव का अभाव करने को अभिलाषा। दुःख का बाह्य रूप पूर्ण दुःख नहीं है। दुःख का आन्तरिक रूप जो वेदना के रूप में जाग्रत् होता है, मानव के विकास की भूमि है। यह भूमि सुर क्षित तभी रह सकती है, जब हम अपने लक्ष्य से निराश न हों।

वेदना जाग्रत् होने पर एक आन्तरिक गहरी माँग उत्पन्न होती है, जो वास्तव में प्रार्थना है। प्रार्थी उस अनन्त को भले ही न माने अथवा न जाने, तो भी वह अनन्त अपनी अहैतुकी कृपा से प्रार्थी की प्रार्थना की पूर्ति कर देता है, किन्तु अपने को प्रकट नहीं करता। यह उस अनन्त की महिमा है, और कुछ नहीं। यदि प्राणी व्यथित हृदय से उन्हें पुकारे तो उसे सबकुछ मिल सकता है। इस दृष्टि से अपने को निर्दोष बनाने में प्रार्थना का मुख्य स्थान है। वह प्रार्थना सजीव तभी होती है, जब की हुई भूल को न दोहरा कर प्रायश्चित्तपूर्वक प्रार्थना की जाय। यदि किसी का प्रार्थना पर विश्वास न हो, तो कहना होगा कि जिस प्रकार प्यास का लगना ही पानी का माँगना है, उसी प्रकार अभाव की बेदना ही प्राथना है। प्रार्थना का अर्थ दीनता तथा पराधीनता नहीं है, प्रत्युत अपनी वास्तविक आवश्यकता की जागृति है, अथवा यों कहो कि जिससे हमारी जातीय तथा स्वरूप की एकता है, उसकी प्रीति है।

चरित्र-निर्माण के लिये यह अनिवार्य हो जाता है कि हम विवेक तथा न्याय का प्रयोग अपने पर तथा विश्वास, क्षमा और प्रेम का उपयोग दूसरों पर करें। विवेक से दोष का ज्ञान होगा और न्याय से निर्दोषता की स्थापना होगी। न्याय वही सार्थक होता है, जो अपने पर किया जाय। न्याय का अर्थ दण्ड

www.swamisharnanandji.org

Swami Sharnanandji (Manav Seva Sangh)

देना नहीं, अपितु सुधार करना है। अतः अपना सुधार करना ही अपने प्रति न्याय करना है। ज्यों-ज्यों अपना सुधार होता जाता है, त्यों-त्यों न्याय प्रेम में, क्रोध क्षमा में, अविश्वास विश्वास में, वैर-भार निर्वैरता में और भिन्नता एकता में बदलते जाते हैं। जो अपने प्रति न्याय नहीं करता, वह दूसरों के प्रति प्रेम नहीं कर सकता।

प्रेम को विकसित करने के लिये अपने प्रति न्याय करना अनिवार्य है। वास्तविक न्याय करने के लिये यह आवश्यक है कि दोष का यथार्थ ज्ञान हो। जितना ज्ञान हमें अपने दोष का होता है, उतना अन्य के दोष का नहीं। इससे यह सिद्ध होता है कि वास्तविक न्याय अपने पर ही किया जा सकता है, दूसरों पर नहीं। दूसरों से तो प्रेम किया जा सकता है अथवा दूसरों को क्षमा किया जा सकता है। क्षमा और प्रेम, निर्वैरता और अभिन्नता प्रदान करने में समर्थ है। निर्वैरता हमें निर्भय बना देती है और अभिन्नता नीरसता का अन्त कर सरस बना देती है, जो सभी को अभीष्ट है।

चरित्र-निर्माण के लिये हमें इन्द्रिय-लोलुपता को जितेन्द्रियता में, स्वार्थ-भाव को सेवा में तथा विषय-चिन्तन को भगवच्चिन्तन में परिवर्तित करना तथा असत् को असत् जानकर सत् की खोज करना अनिवार्य हो जाता है। यह नियम है कि सत् की खोज असत् को खा कर सत् से अभिन्न कर देती है। सत् स्वयं तो असत् का प्रकाशक है, विनाशक नहीं, किन्तु सत् की खोज असत् की विनाशक है। इस दृष्टि से सत्

www.swamisharnanandji.org

Swami Sharnanandji (Manav Seva Sangh)

की खोज सत् से भी अधिक महत्व की वस्तु है, क्योंकि सत् की खोज ही सत् के अभिलाषी को सत् से अभिन्न कर देती है। परन्तु, व्यर्थ-चिन्तन की आसक्ति सत् की खोज जागृत् नहीं होने देती। सत् को खोज जागृत् करने के लिए व्यर्थ-चिन्तन को सार्थक-चिन्तन में अर्थात् वस्तु आदि के चिन्तन को भगवच्चिन्तन में बदलना अनिवार्य होगा। व्यर्थ-चिन्तन को सार्थक-चिन्तन में परिवर्तित करने के लिये स्वार्थ-भाव तथा इन्द्रिय-लोलुपता को सेवा-भाव तथा जितेन्द्रियता में बदलना होगा, तभी हम अपना निर्माण कर सकेंगे।

अपने निर्माण को सुरक्षित रखने के लिये अक्रोध, हृदयशीलता एवं निरभिमानता अत्यन्त आवश्यक है। क्रोध-रहित होने के लिए यह अनिवार्य होगा कि हम दूसरों के कर्तव्य को अपना अधिकार न मानें। अपितु दूसरों के अधिकार को अपना कर्त्तव्य मानें, क्योंकि यदि किसी के कर्त्तव्य को अपना अधिकार मानने लगे, तो उसकी पूर्ति में राग तथा अपूर्ति में क्रोध उत्पन्न होगा। क्रोध सभी दिव्य गुणों को भस्मीभूत कर देता है। अतः क्रोध रहित होने के लिए यह अनिवार्य हो जाता है कि हम किसी के कर्त्तव्य को अपना अधिकार न मानें। हृदयशील रहने के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि अपने प्रति होने वाली उदारता को अपना गुण न मानें, अपितु जिसने उदारता की है, उसकी महानता जानें। ऐसा करने से हृदयशीलता सुरक्षित रहेगी। हृदयशीलता सुरक्षित रहने से परस्पर स्नेह की वृद्धि होगी, जो विकास का मूल है। वह विकास तभी सुरक्षित रह सकेगा, जब किसी की निबलता को अपना बल

www.swamisharnanandji.org

Swami Sharnanandji (Manav Seva Sangh)

न मान लिया जाय। जब हम प्रमादवश किसी की निर्बलता को अपना बल मान लेते हैं, तब अभिमान में आबद्ध हो जाते हैं, जो ह्रास का मूल है।

अपने निर्माण के लिए कर्म-शुद्धि का जीवन में मुख्य स्थान है। पर, वह तभी सम्भव होगा, जब हमारी सभी प्रवृत्तियाँ तथा सम्बन्ध शुद्धभाव से भावित हों, अर्थात् हम सभी को अपना कुटुम्ब जानें। इतना ही नहीं, कर्म का भेद होने पर भी प्रीति का भेद न हो। कर्म की भिन्नता तो अनिवार्य है, क्योंकि योग्यता तथा मान्यता का भेद है। परन्तु स्नेह की भिन्नता महान् दोष है। उसका अन्त किये बिना सच्चरित्रता सम्भव नहीं है। स्नेह की भिन्नता मिटाने के लिए हमें सभी के प्रति परिवार के समान ही सद्भाव रखना तथा सम्बोधन करना होगा। यह सभी को मान्य होगा कि भाव के अनुरूप सम्बोधन करने से भाव में दृढ़ता आ जाती है। भाव के अनुरूप ही प्रवृत्ति होती है और प्रवृत्ति के अनुरूप ही कर्त्ता का स्वरूप हो जाता है, अर्थात् जीवन पवित्रता से परिपूर्ण हो जाता है। अतः बाह्य भेद होने पर भी आन्तरिक एकता सुरक्षित रखना चरित्रवान होने के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

यह सभी को मान्य होगा कि सच्चरित्रता सुरक्षित रखने के लिए हृदय सर्वदा असीम स्नेह से भरा रहे। यह तभी सम्भव होगा, जब हम अपने निकटवर्तियों की क्रियात्मक रूप से यथाशक्ति सेवा करने के लिए सर्वदा उद्यत रहें। कारण, कि सेवा स्वार्थ को खाकर स्नेह की वृद्धि करने में समर्थ है। अतः स्नेह को सुदृढ़ तथा विभु करने के लिए प्राप्त सुख का सद्व्यय,

www.swamisharnanandji.org

Swami Sharnanandji (Manav Seva Sangh)

निर्मोहितापूर्वक कर्त्तव्य बुद्धि से करते रहना चाहिए, जो वास्तव में सेवा है।

सेवा करने की योग्यता तभी आती है, जब हम स्वावलम्बी हों और स्वावलम्बी वे ही हो सकते हैं, जिनका आहार-विहार सुख-लोलुपता को त्याग शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक हित की भावना से हो। सुख और हित में बड़ा भेद है। सुख की आसक्ति हमें पराधीन तथा निर्बल बनाती है और हित हमें स्वाधीन तथा सबल बनाता है। इस दृष्टि से प्रत्येक प्रवृत्ति में सुख-बुद्धि का त्याग और हित-बुद्धि की स्थापना करना अनिवार्य है। सुखकर प्रवृत्ति से चरित्रहीनता तथा हितकर प्रवृत्ति से सच्चरित्रता स्वतः आ जाती है। कारण कि सुख हमें आलस्य तथा विलास की ओर और हित हमें श्रम तथा संयम की ओर गतिशील करता है। सुख से दुख दब जाता है और हित से दुःख मिट जाता है। दुख मिटाना सभी को अभीष्ट है। अतः सुख, लोलुपता को त्याग सवहितकारी भावना से प्रत्येक प्रवृत्ति करना चाहिए, जो चरित्र-निर्माण के लिए महामन्त्र है।

अपने को सुन्दर बनाने के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि शरीर श्रमी हो; कारण, कि शरीर के श्रमी होने से आवश्यक कार्य पूरे हो जाते हैं। और अनावश्यक कार्य मिट जाते हैं। अनावश्यक कार्य मिटते ही मन संयमी हो जाता है, मन के संयमी होने पर बुरे संकल्प मिट जाते हैं और भले संकल्प पूरे हो जाते हैं। ज्यों-ज्यों संयम सबल तथा स्थायी होता जाता है, त्यों-त्यों शुद्ध संकल्पों की पूर्ति का सुख मिटता जाता है। संकल्पपूर्ति का सुख मिटते ही

Swami Sharnanandji (Manav Seva Sangh)

निर्विकल्पता आ जाती है। मन के निर्विकल्प होने पर स्वत: विचार का उदय होता है और फिर बुद्धि विवेकवती हो जाती है। विवेकवती बुद्धि वासनाओं के मिटाने में समर्थ है। वासनाओं के मिटते ही हृदय अनुरागी हो जाता है।

यह नियम है कि अनुराग अहंभाव को अभिमान शून्य कर देता है, क्योंकि अनुराग का प्रादुर्भाव होते ही किसी प्रकार की चाह शेष नहीं रहती। अचाह हो जाने पर अहंभाव स्वत: गल जाता है। अहंभाव के गलते ही जीवन अनन्त नित्य सौन्दर्य से परिपूर्ण हो जाता है। इस दृष्टि से शरीर श्रमी, मन संयमी, बुद्धि विवेकवती और हृदय अनुरागी एवं अहं अभिमान शून्य करना अत्यन्य अनिवार्य हो जाता है।

अपनी सुन्दरता सुरक्षित रखने के लिए यह सभी को मान्य होगा कि सत्य को जीवन में सभी से उत्कृष्ट स्थान दिया जाय। यह तभी सम्भव होगा, कि जब हम अपने को सिक्के की दासता से मुक्त कर सकें। सिक्के की दासता ने ही आलस्य, विलास तथा अभिमान को जन्म दिया है, जिससे चरित्र-हीनता के अतिरिक्त और कुछ नहीं मिला, जो सुन्दरता को सुरक्षित नहीं रहने देती। यद्यपि सिक्के का जीवन में कोई विशेष मूल्य नहीं है। वह केबल आदान-प्रदान का साधन, अर्थात् माध्यम मात्र है। इस दृष्टि से सिक्का वस्तु उत्पादन का साधन मात्र है और कुछ नहीं। वस्तु का उत्पादन सिक्के को संग्रह करने के लिए नहीं है, प्रत्युत व्यक्तियों की रक्षा के लिये है और व्यक्ति का जीवन विवेकपूर्वक सत्य को प्राप्त करने के लिए है।

www.swamisharnanandji.org

Swami Sharnanandji (Manav Seva Sangh)

कारण, कि असत् का त्याग और सत् की प्राप्ति ही मानव का उद्देश्य है। इस दृष्टि से सिक्के से वस्तु, वस्तु से व्यक्ति, व्यक्ति से विवेक, एवं विवेक से सत्य को अधिक महत्व देना अनिवार्य है, जो चरित्र-निर्माण में हेतु है। इतना ही नहीं, सच्चरित्र होने के लिये व्यर्थ-चिन्तन का त्याग एवं वर्तमान का सदुपयोग करना अत्यन्त आवश्यक है।

वर्तमान के सदुपयोग का अर्थ है, सुख-दुःख का सदुपयोग और व्यर्थ-चिन्तन के त्याग का अर्थ है, सार्थक-चिन्तन, अर्थात् तत्त्व चिन्तन एवं भगवच्चिन्तन का उदय होना। सुख का सदुपयोग उदारता और दुःख का सदुपयोग विरक्ति है। उदारता आ जाने पर प्राणी सुख-भोग के बन्धन से मुक्त हो जाता है और विरक्ति आ जाने पर आत्मानुरक्ति अथवा परम प्रेम की जागृति स्वतः होती है, जिसके होने से जीवन अनन्त नित्य सौन्दर्य से सम्पन्न हो जाता है, अथवा यों कहो कि सब प्रकार के अभावों का अभाव होकर पूर्ण हो जाता है अथवा कहो कि जीवन जड़ता, पराधीनता, शक्ति-हीनता आदि दोषों से रहित होकर अनन्त-नित्य चिन्मय परम-तत्व से अभिन्न हो जाता है, जो मानव का उद्देश्य है। अतः चरित्र-निर्माण करने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहना चाहिए, क्योंकि चरित्र-निर्माण के लिए ही मानव-जीवन मिला है।

सुख-दुःख का सदुपयोग साधन का मूल है। वह तभी सम्भव होगा, जब सुख-दुःख को जीवन न मानकर उसे साधन-सामग्री जान लिया जाय। मानव-जीवन में सुख-दुःख के

www.swamisharnanandji.org

Swami Sharnanandji (Manav Seva Sangh)

उपभोग का कोई स्थान ही नहीं है। कारण, कि सुख-दुःख तो पशु-पक्षी आदि भी भोगते हैं। मानव-जीवन तो सुख-दुःख के बन्धन से मुक्त होकर पवित्र प्रेम तथा अमर-जीवन की प्राप्ति के लिए मिला है। वास्तव में ऐसा साधन-युक्त जीवन ही मानव-जीवन है ॥ॐ॥